Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

समकालीन हिन्दी कविता और स्त्री विमर्श

रूमा ज़ैदी
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग,
सनराईज विश्वविद्यालय, अलवर, राजस्थान।

शोध आलेख सार – समकालीन कविता में अब नए प्रकार के और अनेक प्रकार के स्वर सुनाई देने लगे हैं। यह वर्तमान है दौर स्त्री विमर्श के लिहाज से पहले ही अधिक समावेशी और लोकतांत्रिक हुआ है। लैंगिक विभेद और मुक्ति आधारित इस विमर्श को एक नया आराम देती है। अतिवादी विचारधाराओं में मर्द वाद को समाप्त करने की ललक इतने आगे निकल जाती है लगता है वह मर्द को ही खत्म कर देगी अच्छा है मर्द ना रहे और इंसान बचा रहे।

मुख्य शब्द – समकालीन, कविता, स्त्री, साहित्य, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, हिंदी।

भारतीय साहित्य में स्त्री चिंतन की परंपरा बहुत पहले से चली आ रही है। हिंदी साहित्य नारी चिंतन की एक लंबी परंपरा है। आजादी के समय से लेकर आज तक स्त्री विमर्श की एक सुधीर परंपरा है। स्त्री विमर्श में अनेक प्रकार साहित्यिक विधाओं के माध्यम से चिंतन को रेखांकित किया गया है। कहानी उपन्यास आत्मकथा और कविता इन्हीं साहित्य की विधाओं में सर्वाधिक व महत्वपूर्ण विमर्श कारी स्वरूप सामने आता है। इन सभी विधाओं में स्त्री विमर्श अपने अपने तरीके से सामने आता है। सबसे मर्मस्पर्शी तरीके से स्त्री चिंतन का स्वरूप समकालीन कविताओं के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

साहित्य में चिंतन जब से आरंभ होता है, उसका रेखांकन हम कोई समय निश्चित करके नहीं कर सकते। हां इतना अवश्य है कि एक समय सीमा अवश्य बनाते हैं वह भी मोटे तौर पर समकालीन रचनाओं में स्त्री विमर्श के स्वरूप को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम समकालीनता की रेखा अवश्य खींच ले। इस एक काल विशेष की रचनाओं को समझने और उसके विश्लेषण में आसानी होगी। प्रश्न यह है कि हम समकालीनता का निश्चयीकरण कैसे करें। किस समय विशेष से हम रचनाओं को समकालीनता स्वीकार करें। समकालीन का सरलीकरणकृत तरीके से अपने अपने सुविधा के अनुसार इसकी समय सीमा को कम या अधिक के किया जाता है आवश्यकता के अनुसार इसकी सीमा काफी विस्तार न

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

सीमित कर दी जाती है कोशगत अर्थो समकालीनता और समसामयिकता को अंग्रेजी के "कन्टम्प्रोरिनिटी" (Contermporanetty) अथवा "को–ईवाल" (Coeval) का समान वाची माना गया है जिसका अर्थ है "उसी समय या कालखण्ड में होने वाली घटना या प्रवृत्ति या एक ही काल खण्ड में जी रहे व्यक्ति।" यह अर्थ समकालीनता को निश्चित कालखण्ड में समेटता है।[1] **(स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, रेखा कस्तावर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली सं० 2003, पृ0–15–16)**

समकालीनता अपने आप में एक खास प्रश्न है। अनेक विद्वानों ने इस पर अपने मत दिए हैं डॉ० नरेंद्र मोहन कहते हैं ''समकालीन का अर्थ है किसी कालखंड या दौर में व्याप्त स्थितियों और समस्याओं का चित्रण भर नहीं है, बल्कि उन्हें ऐतिहासिक अर्थ में समझना उनके मूल स्रोत तक पहुंचना और निर्णय ले सकने का विवेक अर्जित करना है समकालीनता का तत्कालिकता नहीं है।[2] **(समकालीन कहानी की पहचान डॉ० नरेंद्र मोहन भूमिका पृ०–2)**

डॉ० नगेंद्र समकालीनता कि पहचान आधुनिकता से जोड़ते हुए करते हैं इसमें वह युगबोध को भी शामिल करते हैं लेकिन समकालीनता, समकालीनता और आधुनिकता बोध अलग–अलग है समकालीन होना आधुनिक हो जाना नहीं है और आधुनिक होना समकालीन होना नहीं कोई रचनाकार जिन शब्दों में आधुनिक होता उन्हीं संबंधों में वह प्रासंगिक भी होता है जैसे कबीर प्रासंगिक हो सकते हैं क्योंकि उनमें आधुनिकता बोध है लेकिन वे समकालीन नहीं स्वीकार किए जाएंगे।

समकालीन हिंदी कविता में स्त्री जीवन की अनेक छवियां सामने उभर कर आती हैं। अनेकता संघर्ष करती स्त्री अपने अधिकार व समस्त प्रकार के बंधन से मुक्त होकर मनुष्य की तरीके से जीने की आकांक्षा के साथ सामने आती है। वह मुक्ति के साथ लिंग से भी मुक्ति की आशा रखती है राजनीतिक या सामाजिक समस्याओं को उठाने के स्थान परिवेश और समाज के अनेक छोटे–छोटे संदर्भों को अपनी कविता का विषय बनाना चंद्रकला को अधिक प्रिय है। इन संदर्भों के माध्यम से ही वह किसी संदर्भ तक पहुंचना चाहती है बाहरी दुनिया की अपेक्षा कवित्री मुक्ति अंतर में झांकना चाहती है और आंतरिक जगत की विविधता को उभारना चाहती है।[3] **(समकालीन कविता का सच डॉ० गुरु चरण सिंह पृ० 108)**

व्यक्ति के अंतरंग वह वही रंग का एक आकर ही जीवन का वास्तविक साक्षात्कार है। इस्त्री चिंतन इसी समानता के विमर्श को आगे बढ़ाता है जहां किसी प्रकार की दुआएं दिया दुविधा का भाव नहीं रह जाता मनुष्य केवल मनुष्य के रूप में देखा और स्वीकार किया जाता

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

है जहां सभी सामाजिक व आर्थिक तथा मानव सभ्यताओं द्वारा निर्मित बंधन समाप्त कर दिए जाते हैं किसी प्रकार की सत्ता की कोई भी वर्चस्व की एक बूंद भी नहीं रह जाती।

समकालीन हिंदी कविता में मानव का चित्रण विविध ढंग से हो रहा है। इस दौर की रचनाओं में स्त्री जीवन का स्वरूप काफी हद तक वर्तमान के भूमंडलीकृत व्यवस्था के अनुरूप चित्रित हो रहा है भूमंडलीकरण ने भारत ही नहीं समूची दुनिया में बाजारवाद को जन्म दिया है। इसमें पूरी दुनिया में उपभोक्तावाद को पैदा किया है नवउदारवाद और पूंजी के मुक्त व्यवहार और व्यापार में महिलाओं का उपयोग पूरी तरह तन्मयता से किया जा रहा है। आज समाज का प्रत्येक हिस्सा भूमंडलीकृत व्यवस्था से गहरे स्तर तक प्रभावित है भूमंडलीकरण जीवन के हर कोने में अस्तित्व के हर रूप का वस्तुकरण करता है **(बाजार के बीचन्बाजार के खिलाफ प्रभा खेतान, वागी प्रा० नई दिल्ली संख्या 2004, पृ० 32)**

आज मुक्ति के लिए संघर्षरत नारी के लिए बाजार अनेक प्रकार के नारे करता है और उसके बहाने महिलाओं का इस्तेमाल अपने व्यापार व मुनाफे के लिए करता है। उन्मुक्त आका और देह स्वतंत्रता को पाठ करके वह भोग वादी संस्कृति को बढ़ावा देता है और स्त्री को अपने हक में इस्तेमाल करता है। भोग और प्रदर्शन को नारी मुक्ति का पर्याप बना दो और उन्मुक्त भोग उपभोग को आधुनिकता की अन्यतम उपलब्धि ठहराओ, इसी में सब का कल्याण है।[5] **(आउट लुक दिसंबर 2005, नारी मुक्ति और बाजार मनोहर श्याम जोशी पृ0 28)**

यह जितना सही है कि स्त्री भारतीय समाज में जितना दबी रही है उतना ही उसके दबेपन को इस्तेमाल भी किया गया है उसकी उन्मुक्ता व मुक्ति के नाम पर जैसे जैसे देश में नारी आंदोलन चलते हैं, स्त्री जीवन के अनेक बंधनों को तोड़ने की बात उठती है वैसे–वैसे समूची सामाजिक बापूजी का व्यवस्था बड़े ही सचेत ढंग से इस परिवर्तन को अपने पक्ष में करने के उद्यत हो जाती है। प्रगतिवादी एवं स्त्रीवादी आंदोलनों ने स्त्री विमर्श को एक नया हमाम दिया साठ–सत्तर के दशक के बाद यह स्त्री आंदोलन एक नया और मुखर स्वरूप धारण करता है इसमें अब पहले जैसा शर्मिला व लचीलापन नहीं रहता। उदारीकरण के बाद खासकर 90 के दशक के बाद से स्त्री विमर्श की सभी बंधी बंधाई मान्यताएं टूटती हैं और स्त्रियां अपने जीवन के विमर्श को बड़े ही इंकलाबी तरीके से बढ़ाती हैं।

स्त्री अनेक प्रकार से संघर्ष करती है अपने लिए बंद दरवाजों को खोलती है वह सामाजिक संबंधों को सुलझाने का प्रयास तो करती ही है वह व्यक्तिगत जीवन में पारिवारिक जीवन के उलझे पहलुओं से मुक्त होने का प्रयास करती है। इसमें स्त्री जीवन की अपनी एक अस्मिता भी उभर कर सामने आती है।

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

"धीरे धीरे
मेरे कंधे से
उतर रहा है मेरा घर
धीरे धीरे उतर रही है चमड़ी
मेरे ये कपड़े
मेरे सामने
घुटनों के बल बैठे
कह रहे हैं कि अब बहुत हुआ।"[6] **(अबुद्ध अनामिका, राजकमल प्र0, नई दिल्ली पृ0 56)**

अनामिका की यह कविता जितना अपना अर्थ देती है उससे कहीं अधिक कुछ महत्वपूर्ण अर्थों को ध्वनित करती है। स्त्री अब केवल एक घर की विषय वस्तु नहीं है इसमें सबसे महत्व की बात यह दर्शायी गई है कि स्त्रियां अब "हाउस वाइफ" के टैग से मुक्त होना चाहती हैं इस कविता के अंत में कह भी बैठता है अब बहुत हुआ। इसका तात्पर्य यही है कि अब तक बंधन दास्तां जो बेमकसद यह तहजीबी लिबास ओढ़ाया गया था उसे अब उतार देने का समय आ गया है उसमें एक खींझ भी है और गुस्सा भी। यह अभिव्यक्तियां मौलिक रूप से पुष्टि जकड़ बंदी के खिलाफ हैं जिसमें औरतों को इंसान नहीं माना गया है इस प्रकार की कविताएं मर्द वादी परिवेश व व्यवस्था का प्रतिकार करती हैं।

"जैसे कि मजदूरनी
तोड़ती है पत्थर
मैंने तोड़ा खुद को
टूट टूट कर
धूल धूल कंकड़ी हुई
एक चारपायी के पाये के नीचे
मुझको दबाकर
बढ़ाया गया उसका कद।"[7] **(खुरदुरी हथेलियाँ, अनामिका, राजकमल प्र0 नई दिल्ली पृ0 42)**

यह कविता पितृसत्तात्मक समाज के उन सभी रवायती क्रूरताओं को रेखांकित करती है जिसने स्त्री को छला है पाए के नीचेध्मुझे दबाकर जैसी बातें अत्यंत मार्मिक व निस्सहापता कि द्वावग्ंथ है और उसके अंगड़ाई की पहचान भी है वह अब जान चुकी है कि स्त्री को कितना और किस प्रकार से दबाया गया केवल और केवल पुरुषवादी मानसिकता और वर्चस्व की

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

एकाधिकार स्थापना के लिए जो स्त्री मर्द वादी व्यवस्था की शिकार है वह उससे उबरने का भी प्रयास करती है। उन तमाम विषम परिस्थितियों से मुक्ति के लिए संघर्ष का रास्ता चुनती है।

"एक गुमसुम गुस्सा
डबल रहा है धीर–धीरे
जैसे उबलते हैं
मुट्ठी भर चावल
शरणार्थी शिविर के बाहर
मिट्टी की हांडी में
लकड़ियों की आग पर
धीरे–धीरे लेकिन लगाता"[8] **(वही, पृ0 181)**

स्त्री जीवन अपनी अस्मिता और स्वल्ववोध को लेकर काफी सतर्क है। उसने धीरे–धीरे इस पितृसत्ता के शोषणकारी चरित्र की समझ बनी है इस समझ के विकसित होने के साथ ही उसमें उस व्यवस्था के खिलाफ काफी गुस्सा भी है इस गुस्से को उसने पालना भी सीखा है और सभी प्रकार की कुव्यवस्थाओं से लड़ने का हुनर भी इजाद करने का प्रयास किया है।

समकालीन कविता में स्त्रियों के द्वारा लिखी गई कविताओं में अधिक मार्मिकता और अनुभूति की प्रमाणिकता है उसमें स्त्री जीवन की आकांक्षा स्वभाव रूप से बयां हुई है।

"चली जाती हूँ
उन घाटियों में भटकने
जहाँ कतई उम्मीद नहीं है उससे निकलने की
मेरी कल्पना ने जिसे चुना है
जाती हूँ लौटने हर बार नये सिरे से
उन्हीं अक्षरों के बीच
जिनसे मिलती जुलती हूँ
मिलती जुलती है जो कितनी उन निम्नों से फिर
जिनके अर्थ छिपे रहते हैं
उजागर होकर भी।"[9] **(स्वप्न समय सविता सिंह, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0 2013, पृ0 53)**

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

यह स्त्री जीवन की स्वप्निल सच्चाई है इस प्रकार की रचनाओं में कवयित्री स्त्री की स्वभाविक आकांक्षा और यथार्थ के स्वरूप को पहचाना है और उसे अपनी रचना का उप जीव भी है बनाया है। आदर्श और वास्तविक जीवन के अंतर को मिटाने का संघर्ष ही स्त्री विमर्श का केंद्रीय बिंदु है मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करने की एक ललक है जोकि अत्यंत उत्कृष्ट है कुछ इस प्रकार का यह भावना व्यक्त हुई है।

"कुछ और नहीं होता
तब कुछ और करने लगती हूं
सोचती यह आसान होगा
सोचती इसमें मिल जाएगी कोई राह
थोड़ी दूर चल कर फिर आशक्त हो जाती हूं
हाथ बांधे उधर मिलती है मेरी ही कोई कामना
महत्वाकांक्षा कोई गर्दन झुकाए
मिलती है आस्थापों ही बमतलब खड़ी
आंसू भरे नयन मिलती हैं
बिखरी हुई कोई सुंदर इच्छा।"[10] **(अपने जैसा जीवन–सविता सिंह राधा कृष्ण नई दिल्ली सं० 2009, पृ० 32)**

स्त्री की चिंता अपने जीवन की उन राहों को तलाशने की जिस पर चलकर वह मनुष्यता का भाव अर्जित कर सके चारों तरफ उसके सपनों का मानमर्दन ही दृष्टिगोचर होता है। वह उसके निकलने के लिए पूरी व्यग्रता से पंथ अमवेषण कर रही है इस दौर की कविता में स्त्रियों को परिस्थितियों पर मात्र रुदन करने वाली की तरह से ही नहीं पेश किया जा रहा बल्कि उन तमाम विपरीत परिस्थितियों से टकराने की क्षमता का भी निरूपण हो रहा है।

"मैं औरत हूं
नहीं है मेरे पास
दो चेहरे
दो मुंहे
और दो तरह का जीवन
मैं जो हूं हूं
जो नहीं हूं नहीं हूं
मुझे अफसोस नहीं

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

कि मैं सीता सावित्री के
सांच में फिट नहीं बैठती
बस इतना काफी है
कि मैं मनुष्य हूं।"[11] **(जब मैं स्त्री हूँ, रंजना जायसवाल, नयी किताब, नई दिल्ली, सं0 2009, पृ0–32)**

स्त्री विमर्श में कविता के माध्यम से ऐसी प्रतिरोधी भावना उन सभी पुरुषवादी संस्थाओं के खिलाफ विद्रोह है जो स्त्री समाज को दलता है। इस छल और प्रपंच में जितने आदर्श और प्रतीक गढ़े गए हैं उनका भी नकार इसमें दर्ज है बड़े ही मजबूती के साथ में नकार स्वीकारोक्ति के साथ अभिव्यक्त किए गए हैं प्रतिकार और तंजिपा लहजे में स्त्रियां अपने जीवन की निर्मम सच्चाई को कुछ इस प्रकार बयां करती हैं।

"बता सकते हो
सदियों से अपना घर तलाशती
एक बेचैन स्त्री को
उसके घर का पता।"[12] **(नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, निर्मला पुतुल, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सं0 2012, पृ0–7)**

समकालीन कविता में आज तक अनुत्तरित सवालों को उठाया जा रहा है यह कविताएं मर्द वादी समाज के संस्कारों को काफी गहरी चोट कर रही है और सवाल उठा रही है स्त्री जीवन के बंधन को समझा भी ठीक ढंग से जा रहा है उसकी अभिव्यक्ति भी बड़े ही सलीके से हो रही जैसे स्त्री विमर्श की समकालीन परंपरा और प्रौढ़ हो रही है वैसे–वैसे बंधन से मुक्ति आकांक्षा और बलवती एवं मुखर्जी हो रही है या कविता देखने योग्य है।

"यह स्त्री सब कुछ जानती है
पिंजड़े के बारे में
जाल के बारे में
रहस्य है इस स्त्री की उलटवासियाँ
इन्हें समझों
इस स्त्री से डरो।"[13] **(दुर्गद्वार पर दस्तक कात्यामर्नी, पृ0–15)**

समकालीन कविता जितना पितृसत्तात्मक समजा से लड़ रही है उतना वैश्वीकृत बाजारवादी जमाने से भी। यह लड़ाई दोहरी है इसमें सत्ता–प्रतिस्ठानों से मुक्ति की गुहार भी है और अधिकार प्राप्ति का उद्धोष भी।

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

"हाँ मैं बागी हूँ
समाज के बनाये ये चौखटों में फिट न हो सकी
चाहा प्रेम के बदले प्रेम
समर्पण के बदले समर्पण
मैं विद्रोही हूँ।"[14] **(जब मैं स्त्री हूँ, पृ0 26)**

यह विद्रोही चेतना अकारण नहीं है इसके मूल में अतीत की वितृष्णा मौजूद है यह क्षोभ समकालीन कविता में बड़े ही संस्लिष्ट ढंग से व्यक्त हुआ है जहां पर रूढ़िवादी सामाजिक ताने–बाने की जई परंपरा का अंकन भी है और उपभोक्तावादी चरित्र के दोहन की निशानदेही भी।

"अब बाजार स्त्री के कदमों में है
उसके केश सहलाता उतारता कपड़े
सामान कोई भी हो
बेची जाती है हमेशा स्त्री"[15] **(स्त्री मुक्ति का सपना, पृ0 163)**

इस पूरे समाज में मनुष्य की तरीके से जीने के अभ्यास में स्त्री अपने संघर्ष पथ पर अनवरत चल रही है।

"खत्म होती जा रही है
समय से पूर्व स्त्री
तालमेल बिठाने में
दुनिया बदल गयी है
दो दो बारों में
धीरे–धीरे आगे बढ़ती
गली को सकरा करती
जहाँ खड़ी है वह।"[16] **(जब मैं स्त्री हूँ, पृ0 75)**

आज अरे प्रकार से हिंदी कविता स्त्री विमर्श को समृद्ध कर रही है। जल जंगल जमीन आदि अनेक प्रश्नों को रेखांकित किया जा रहा है देश को प्रभावित करने वाले सामूहिक मुद्दों को स्त्री विमर्श के माध्यम से उठाया जा रहा है।

''कुर्सीयाँ है तभी देश चलता है और
तभी चलती है नेताओं की नेतागिरी
कुर्सी हो तो है जिसके केंद्र में घूमती है

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.

Journal of Advance Research in Science and Social Science (JARSSC) **ISSN:** 2582-2004
Official Publication of Indian Mental Health & Research Centre Volume 02, Issue 01

DOI: 10.46523/jarssc.02.01.22
Multidisciplinary, Open Access
Impact Factor: 2.765

देश की राजनीति और उसके प्रभाव से
गिरता उतरता है देश का तापमान।"[17] **(बेघर सपने पृ0 28)**

समकालीन कविता में अब नए प्रकार के और अनेक प्रकार के स्वर सुनाई देने लगे हैं यह वर्तमान है दौर स्त्री विमर्श के लिहाज से पहले ही अधिक समावेशी और लोकतांत्रिक हुआ है। लैंगिक विभेद और देह मुक्ति अवधारक इस विमर्श को एक नया अमाम देती है। अतिवादी विचारधाराओं में मर्दवाद को समाप्त करने की ललक इतने आगे निकल जाती है लगता है वह मर्द को ही खत्म कर देगी अच्छा है मर्द ना रहे और इंसान बचा रहे।

Received: 02.01.2019 **Accepted:** 02.01.2019 **Published**: 30.01.2019

This work is licensed and distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any Medium, provided the original work is properly cited.